# जब मिल जाये रे

गहन चिंतक - सिद्धांतज्ञ

श्रमणाचार्य 108 श्री

विनम्रसागर महाराज

कृति :

# जब मिल जाये रे

शुभाशीष :

जैनाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज

लेखक

प्रखर वक्ता श्रमणाचार्य विनम्रसागर

प्रथमावृत्ति 2200 प्रति

द्वितियावृत्ति

प्रकाशक

धर्म प्रभावना ट्रस्ट न्यास सीपुर 9828613614

प्राप्ति स्थान

सम्यग्ज्ञान विराग विद्यापीठ, भिण्ड

देवेन्द्र जैन, बड़ी बजरिया, बीना ( 07580-223344 )

सीपुर समता तीर्थ धाम, सीपुर 9828613614

कम्प्यूटर डिजाइन एवं मुद्रक :-

मुकेश जैन 94145-55103

आर्यन् एजेन्सीज्

इन्द्रा बाजार, अजमेरी गेट, जयपुर

(सर्वाधिकार सुरक्षित)

पुनः प्रकाशन हेतु ज्ञानदान राशि - 15/-रु.मात्र

# हमारी नजर में अनूठा व्यक्तित्व
# आचार्य विनम्रसागरजी महाराज का

**प्रखर बुद्धि व श्रेष्ठ प्रतिभा के धनी परम पूज्य आचार्य श्री विनम्रसागर जी महाराज ने जन्म से ही प्रतिभा को अभिव्यक्त किया 5 वर्ष की उम्र में आप तीसरी क्लास में पढ़ते थे। पढ़ने में हमेशा अव्वल रहे मात्र 20 वर्ष की उम्र में (1984 में) आपकी एक विद्यालय में गवर्मेण्ट सर्विस लग गई थी 1986 में आपने एम.कॉम. जिला टॉप (दो विषय में विशेष योग्यता) प्राप्त करके प्रोफेसर पद के लिए तैयारी कर ली थी लेकिन एम.कॉम करने के बाद वही हुआ जो पुरुषार्थ लिखता है विधि ने वैराग्य की ओर मोड़ दिया और फिर विरक्त होकर सर्विस की तथा 8 अगस्त 1992 को सर्विस त्याग कर दी और 9 अगस्त 1992 को ऐलक बन गये तथा 8 जून 2003 को ललितपुर में मुनि दीक्षा प्राप्त की।**

**आचार्यश्री ने चारों अनुयोगों का विशेष अध्ययन किया आपके पिताजी प्रकाण्ड विद्वान थे उन्होंने भी मुनि दीक्षा प्राप्त करके सन् 2002 में बीना (म.प्र.) में समाधि प्राप्त की। विशेषता ये कि अपने पिता की समाधि उन्हीं के पुत्र मुनिश्री ने कराई। न्यायशास्त्र, नयशास्त्र, आध्यात्मिक शास्त्र व सिद्धान्त ग्रंथों का गुरूमुख से अध्ययन करके हर बात पर मंथन किया। आचार्यश्री जैसी विचक्षण कला वर्तमान में किसी विरले ही साधु में देखने को मिलती है वह है काव्य शैली की कला हर काव्य पर लिखने का अधिकार रखने वाले धर्म की बात को व्यक्ति के जेहन में उतार देते हैं आचार्यश्री की आवाज में ही संगीत निकलता है सभी आगम के ज्ञान के साथ काव्यकला होते हुए श्रेष्ठ प्रवचन शैली एवं निर्दोष चर्या का पालन आचार्यश्री का आकर्षक चुम्बकीय व्यक्तित्व है।**

**'' जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि''** लेकिन आचार्यश्री की बात है **''जहाँ न पहुँचे कवि वहाँ पहुँचे अनुभवी''** हर बात को अनुभव की कसौटी पर परखकर स्वीकार करने वाले हमेशा आगम की बात को ही श्रद्धान करने वाले, जिनकी भाषा शैली विवादों से रहित, पंथों से दूर केवल वीतरागी और निर्ग्रन्थ भाषा को बोलने वाले, जैन धर्म के मूलग्रंथ श्री धवलाजी, जय धवलाजी, महाधवलाजी का गुरुमुख से अध्ययन करने वाले करणानुयोग पर प्रकाण्ड विद्वत्तता रखने वाले प.पू आचार्यश्री के ऊपर लोगों ने पी.एच.डी. करने को कहा तो आचार्यश्री ने उस समय मना कर दिया क्यूँकि उस समय आचार्यश्री, ऐलक (सन् 1996 में) थे काव्य क्षेत्र में **लगभग 800 कविताएँ, 500 भजन,**

**300 गज़लें, 2000 मुक्तक, 2000 पहेलियाँ (पद्य में) दस तरह का हिन्दी में भक्तामर, जीवन चलती साँस यहाँ, जीवन जलता दिया यहाँ, गुरू चरणों की धूल यहाँ, जीवन है पानी की बूँद** आदि दस तरह के ऐसे गीतों पर **लगभग 800 छंद** लिख चुके हैं जो पूरे भारत में प्रसिद्ध हो चुके हैं हर संगीतकार एवं साधु साध्वी जिन्हें गाकर व सुनकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करते हैं एवं सभी स्तुतियों के पद्यानुवाद, कई पूजायें व कई ग्रंथों के पद्यानुवाद किये हैं आचार्यश्री ने **णमोकार महामंत्र को अंग्रेजी में** ऐसा लिखा है जिसे णमोकार मंत्र की तरह गाया जाता है एवं उसकी महिमा भी अंग्रेजी में गीत की तरह लिखी है वीतराग स्तोत्र एवं कई भजन भी अंग्रेजी में लिखे एवं 5 पुस्तकें भी अंग्रेजी में लिखी हैं।

आचार्यश्री के मामाजी कलेक्टर और प्रोफेसर हैं चाचाजी डॉक्टर और बैंक ऑफिसर है जीजाजी अनुसंधान अधिकारी दिल्ली एवं कई भाई सर्विस में हैं लेकिन आचार्यश्री का पूरा खानदान सोनगढ़ परम्परा का है केवल आचार्यश्री के परिवार को छोड़कर।

आचार्यश्री का संस्कृत भाषा पर अच्छा वर्चस्व है शब्द विज्ञान जिन्होंने आत्मसात् किया है हिन्दी–अंग्रेजी, उर्दू, प्राकृत, संस्कृत और ज्योतिष भाषा का ज्ञान रखने वाले गुरुदेव ने कई पुस्तकों को लिखा है आकर्षक शैली वर्तमान परिवेश को प्रभावित करने वाली है। मुनि श्री से प्रभावित होकर कई लोग दीक्षा ले चुके हैं और कई लोग ब्र.व्रत लेकर साधनारत हैं। आचार्यश्री सभी संघों से मिलकर अपनी विशेष चर्या की और तार्किक एवं मार्मिक ज्ञान की अलग छाप छोड़कर आते हैं। आचार्यश्री का भक्तामर और पूजन शिविर आज भी अद्वितीय बना हुआ है ऐसा भक्तामर शिविर पूर्व में किन्हीं भी साधुओं के द्वारा प्रतिपादित नहीं किया गया। आचार्यश्री को भक्तामर स्तोत्र व जिनेन्द्र पूजन का कोच (विशेषज्ञ) कहा जाता है।

आचार्यश्री के चातुर्मास की स्मृतियाँ व्यक्ति जीवन भर तक स्मरण करता ही रहेगा आचार्यश्री के भक्तामर शिविर और प्रवचन शैली की अनूठी मिशाल है हमारी समाज उनके चरणों में नममस्तक होती हुई आचार्यश्री के रत्नत्रय की उत्तरोत्तर वृद्धि की शुभकामना करती है और मन वचन काय से त्रिवार नमोऽस्तु करती है।

**श्री मज्जिनेन्द्र पूजन मण्डल**
**खांदू कॉलोनी, बांसवाड़ा**

णमोकार मंत्र की तरह गाये जाने वाला अँग्रेजी में णमोकार मंत्र

## *Namokar Mahamantra*

*I bow to all Arihantas.*
*I bow to all Siddhas.*
*I bow to all Acharyas.*
*I bow to all Upadhyayas.*
*I bow to all Saints in the world*

*This Namokar mantra about to destroy all sins.*
*And first is auspicious in the all auspicious*

**Acharya Vinamra Sagar**

## णमोकार महामंत्र

**णमो अरिहंताणं**
**णमो सिद्धाणं**
**णमो आयरियाणं**
**णमो उवज्झायाणं**
**णमो लोए सव्व साहूणं**

ऐसो पंच णमोयारो सव्व पावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवई मंगलं ।।

## रचयिता की कलम से

काव्य स्रजन की कला बहुत ही श्रेष्ठ कला है ये कला आत्मविभोर कर सकती है ये कला अपनी बात को बड़े मीठे ढ़ंग से बहुत आराम से कह सकती है सबको अपनी ओर आकर्षित कर सकती है कवि काव्य स्रजन में अपने समय का सदुपयोग करता है कविता के विषय को पहले अनुभूत करता है तत्पश्चात् काव्य कला और विद्वत्तता के बल पर उसे शब्दों में गूँथकर छंद बनाता है यह कला ऽवक हपजि कही जाती है ऐसी काव्यस्रजन की शक्ति हमें अपने गुरुदेव प.पू.आचार्य श्री विरागसागरजी महाराज के आशीर्वाद और उनके प्रोत्साहन से प्राप्त हुई।

धार्मिक कविता लिखना, व्यंग्य लिखना, गीत ग़ज़ल लिखना आदि ये सब हमारे आत्मरंजन के साधन बन गये। हमने यह अनुभव किया कि काव्यरस से जीवन में स्वस्थता प्रकट होती है कोई भजन गाने पर आत्मिक शांति स्वयमेव अनुभूत होती है। साधू को काव्यकला हो तो इससे अच्छी और क्या बात हो सकती है क्योंकि उसका मन निरंतर धर्म की बातों को छंदों में गूँथने में लगा रहता है।

हमारा काव्य रचना का ध्येय सिर्फ इतना ही है कि सारे लोग उन रचनाओं को पढ़कर गुनगुनायें और आनंदित होकर अपने जीवन में निर्मलता को प्राप्त कर सफल बनावें। इन कविताओं को बनाने में सारा श्रेय हमारे गुरुवर का है हम तो गुरु की कृपा से शब्दों को गूँथ देते हैं ऐसे श्रद्धेय गुरुवर के चरणों में विनम्र नमोऽस्तु–3

**Acharya Vinamra Sagar**

# जब मिल जाये रे

मानस मर्मज्ञ महाकवि तुलसीदासजी ने भगवान राम की बाल्यावस्था का वर्णन करते हुए गुरु की महिमा पर भरपूर प्रकाश डाला है और अपने महानायक राम से सर्वप्रथम गुरु को प्रणाम कराया है **''प्रात: काल उठ कहिं रघुनाथा, गुरु पितु मात नवावहिं माथा।''** माता पिता और गुरु तीनों में सर्वप्रथम गुरु को प्रणाम किया है क्योंकि गुरु जीवन जीना सिखाता है।

गुरु शब्द देखने व सुनने में बहुत छोटा सा, मामूली सा नजर आता है लेकिन इसका अर्थ, इसकी परिभाषा, इसका रहस्य अमूल्य और विशाल है, तभी तो कवि को कहना पड़ा – ''

**सब धरती कागज करूँ, लेखनी सब बन राय,**
**सात समन्दर मसि करूँ, गुरु गुण लिखा न जाय''**

गुरु के बारे में जब कुछ कहने को या लिखने का कहा जाय तो न ही शब्द खत्म होते और न कलम थमती है। आज गुरु पूर्णिमा मनाने हम सब यहाँ एकत्रित हुए हैं। आपकी जानकारी के लिए बताना चाहूँगा कि आज गुरु पूर्णिमा भारत के साथ अन्य देशों में भी मनाई जाती है। कोई किसी भी रूप में मनाये पर सत्य तथ्य तो यह है कि आज के दिन भगवान महावीर की केवलज्ञानोपरान्त 66 दिन बाद दिव्य ध्वनि खिरी थी, मोक्ष मार्ग का उपदेश मिला था, सात तत्त्व, नौपदार्थ, छः द्रव्य क्या होते हैं इनका स्वरूप जाना था गौतम स्वामी ने। जब तक इन्द्रभूति ब्राह्मण ने स्वयं को वीर प्रभू के चरणों में समर्पित नहीं किया, उनको गुरु नहीं माना, उनका शिष्यत्व धारण नहीं किया तब तक गुरुवाणी या वीरवाणी सुनने को नहीं मिली।

**''गौतम गणधर ने जब जगत गुरु को पाया तभी सही रास्ता मिल पाया।''** पूर्णिमा के दिन चाँद अपनी पूरी किरणें बिखेरता है और आज गुरु पूर्णिमा के दिन गौतम के ऊपर जगद्‌गुरु भगवान महावीर का आशीर्वाद मिला यानि उस पूर्ण चाँद की किरणें गौतम के ज्ञान रूपी जल पर पड़ी तो जल चाँदी की तरह चमक उठा

यानि सारा मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान में परिवर्तित होकर केवल ज्ञान प्राप्त कराने में सहायक हुआ। गुरु और शिष्य का यही तो रिश्ता है जो अपने आश्रित कर ले या शिष्य को अपने समान बनाले वही सच्चा गुरु है भक्तामर के 10 वें छन्द में आचार्य मानतुंग जी ने भगवान आदि प्रभु की स्तुति करते हुए यही तो कहा–

**नात्यदभुतं भुवन भूषण! भूत नाथ!**
**भूतै–र्गुणे–र्भुवि भवन्त–मभिष्टु वन्त:।**
**तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,**
**भूत्याश्रितं य इह नात्म समं करोति।।**

गुरु और शिक्षक दोनों में बहुत अन्तर है **''गुरु और शिष्य का प्रेम हार्दिक होता है शिक्षक और विद्यार्थी का मानसिक''** आज के दिन अन्तिम तीर्थंकर, वर्तमान शासन नायक भगवान महावीर की वाणी खिरी थी गौतम गणधर ने झेल कर सभी को सुनाई थी इसीलिए इस पावन पुनीत दिवस को हम गुरू पूर्णिमा के रूप में मनाते हैं। इसीलिए आज के दिन हमसब मिल कर गुरु के गुण गाते हैं – **गुरु शब्द का अर्थ– वैसे तो गुरु शब्द दो अक्षरों से मिलकर बना है। गु+रु = गु का अर्थ होता है अन्धकार और रु का प्रकाश अर्थात् जो हमें अंधकार से प्रकाश की ओर लाये वह गुरु है। दूसरा अर्थ निकलता है ग= गम्भीर और र = रहस्यवादी जो समुद्र के समान गम्भीर और रहस्य वादी होते हैं वे गुरु होते हैं।**

एक बार चाणक्य और चन्द्रगुप्त एक जंगल में तालाब के किनारे से गुजर रहे थे। इतने में चाणक्य को घोड़ों की टापें सुनाई दीं, वे स्थिति को भाँप गये और तुरन्त चन्द्रगुप्त को आदेश दिया कि जाओ तालाब के बीचोंबीच जो पेड़ है उसके नीचे छिप जाओ। चन्द्रगुप्त को गुरु आज्ञा शिरोधार्य थी उसने वैसा ही किया जाकर तालाब के बीच पेड़ के नीचे छिप गया। इतने में ही नन्दराज्य के सैनिक आये और पूछा कहाँ है चन्द्रगुप्त? हमें अभी नन्द राजदरबार में उसे पेश करने का आदेश मिला है। चाणक्य ने बड़ी गम्भीरता पूर्वक कहा वो देखो तालाब के बीच जो वृक्ष देख रहे हो उसी के नीचे बैठा है चन्द्रगुप्त। सैनिकों ने सुना और अपने सारे वस्त्र, अस्त्र–शस्त्र उतारे और तालाब में घुस गये। क्योंकि शस्त्र–अस्त्र

लेकर तालाब में तो जा नहीं सकते थे। जैसे ही सैनिक आधी दूर पहुँचे कि चाणक्य ने उनके ही शस्त्रों से सैनिकों को खत्म कर दिया और चन्द्रगुप्त को आवाज दी कहा चन्द्रगुप्त बाहर आ जाओ। जैसे ही चन्द्रगुप्त बाहर आया गुरुजी को प्रणाम किया तब चाणक्य ने पूछा कि यह बताओ चन्द्रगुप्त जब मैंने सैनिकों को तुम्हारे छिपने का सही सही स्थान बताया था तब तुम्हें कैसा लगा था? चन्द्रगुप्त ने सहज भाव से कहा मैंने यही सोचा था कि आपकी इस बात में भी कोई न कोई रहस्य अवश्य होगा और वो सामने आ गया। तो गुरु शब्द सार्थक हो गया।

यह तो हुई बात शब्दों में से अर्थ निकालने की क्योंकि प्रत्येक अक्षर प्रत्येक शब्द अपने अन्दर कई अर्थ छिपाए रहता है। अक्षर का मतलब ही है अ+क्षर अ=न+क्षर = नष्ट/क्षय नहीं है क्षरण या क्षय जिसका वह है अक्षर। इसी प्रकार गुरु शब्द भी अपने अन्दर अनेक अर्थ समेटे हुए है। हमारे मन में अनेक प्रकार के विकल्प उठते हैं, गुरु क्या हैं, गुरु की परिभाषा क्या है, गुरु कहाँ से आते हैं गुरु कैसे होते हैं तो कहा है –

**गुरुवर मेरे दर्पण हैं सब कुछ उन्हें समर्पण है– 2**
**गुरुवर दिल में हरक्षण हैं – ऽऽऽ**
**गुरु से जीवन मधुवन है, गुरु से खिलता गुलशन है – 2**
**गुरुवर सूरज हैं – ऽऽ अंधियार भगायें रे – ऽऽऽ**

संसार में अनेक प्राणी हैं और उन्हीं के अनुसार उनकी वाणी है, कोई गुरु को समन्दर कहता है, कोई आकाश, कोई चाँद, कोई दर्पण तो कोई कमल तो कोई गुलाब कोई कुम्भकार, कोई शिल्पी, कोई जल की तरह तो कोई मोमबत्ती की तरह, कोई वैद्य तो कोई जज की तरह गुरु को मानते है। वास्तव में बात सिर्फ इतनी है कि जो हमें अंधकार से प्रकाश की ओर लाकर खड़ा कर दे, जो संसार रूपी कीचड़ में कमलवत् खिलाकर ऊपर उठा दे वह गुरु है। **''गुरु तो स्वयं कमल की तरह हैं''** आपने देखा होगा कि कमल कीचड़ में खिलता है लेकिन कीचड़ उसके अन्दर नहीं होता है। और एक बात पर गौर किया हो तो कमल हमेशा ऊपर की तरफ मुँह करके

खिलता है। ठीक उसी प्रकार हमारे गुरु होते हैं संसार रूपी कीचड़ में राग–द्वेष के परिवेश में रहते हैं फिर भी संसार के भोग–उपभोग की आकांक्षा, राग–द्वेष की भावना, कामना और वासना का कीचड़ उनके अन्दर नहीं रहता है। वे कीचड़ में रहकर यानि संसार में रहकर संसार से अलग रहते हैं। उनकी अपनी एक अलग दुनियाँ है वह है आत्मा और परमात्मा की दुनियाँ। **''गुरु में संसार नहीं संसार में गुरु होता है''।**

तो बात चल रही थी जो संसार मार्ग से हटाकर मोक्ष मार्ग में लगा दे मोह को छुड़ा दे, सत्पथ दिखा दे वह गुरु है। फिर वह कोई भी हो सकता है। माँ–बाप, भाई–बहिन, पत्नि–पति, बच्चे मित्र कोई भी हो सकता है। आपने सुना होगा आचार्य कुन्दकुन्द की माँ मदालसा के बारे में वह माँ अपने सभी पुत्रों को **शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरंजनोऽसि...........** लोरी सुनाकर सुलाती थी। उसी का परिणाम है कि हमें ऐसे गुरु की इस दुष्काल में प्राप्ति हुई जिन्होंने जैन वाड्;मय को अविस्मरणीय कृतियाँ प्रदान की।

वास्तव में देखा जाये तो अपनी आत्मा ही अपना गुरु है दूसरे तो मात्र निमित्त बनते हैं। 'भगवान महावीर के सिद्धान्त भी अनूठे हैं क्योंकि उन्होंने बताया है हम अपने कर्तापने को, अपने अहंकार को मिटाने के लिए निमित्त को श्रेष्ठ मानते हैं'' और कहते हैं।

**गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागें पाँय ।**
**बलिहारी गुरु आपने गोविन्द दियो बताय ।।**

सही मायने में तो गुरु अपनी आत्मा ही है। फिर भी भगवान महावीर का सिद्धान्त निमित्त को भी उसके अनुरूप स्थान देता है। याद आता है – एक गाँव में एक पति पत्नि रहते थे। सुख पूर्वक आनन्दमय गृहस्थ जीवन यापन करते थे। एक समय उनके जीवन में ऐसा आया कि पति को वैराग्य उत्पन्न हुआ उसने संसार शरीर और भोगों को तिलांजलि दे दी और दिगम्बरी दीक्षा धारण कर मुनि बन कर जंगल में तपश्चरण करने लगे। पत्नि भी धर्मात्मा थी उसने भी पति के वैराग्य में अपने मोह को आड़े नहीं आने दिया और वह भी ब्रह्मचर्य व्रत लेकर घर में ही श्राविका के व्रत पालन करते हुए

रहने लगी।

जीवन चक्र अपनी गति से चलता जा रहा था। समय कुछ यूँ आया कि वे मुनिराज उसी गाँव में पहुँचे जहाँ उनने अपना पूर्व जीवन बिताया था। जैसे ही वे गाँव पहुँचे उन्हें अपना पूर्व जीवन याद आ गया और पत्नि के प्रति स्नेह, मोह जाग उठा वे नगर के एक उद्यान में रुके थे। गाँव के लोग दर्शनार्थ आये उनमें वह स्त्री भी थी जो पहले उन मुनिराज की पत्नि थी और अब ब्रह्मचारिणी थी। दर्शन करके वह समूह के साथ बैठ गई। मुनिराज ने पूछा इस गाँव में एक नागला नाम की स्त्री रहती थी वह अब कहाँ है? लोगों ने उत्तर में कहा उसके पति ने तो दीक्षा ले ली और वह भी अब ब्रह्मचारिणी बनकर इसी गाँव में रहती है और धर्मध्यान पूर्वक अपना जीवन बिताती है। मुनिराज को उसने पहिचान लिया कि ये मेरे पति थे। मुनिराज अक्सर आते जाते लोगों से उसके बारे में पूछते थे मुनिराज में उत्सुकता को बढ़ते देख नागला पीछे के पीछे नमोऽस्तु कर घर चली जाती और पत्नि के स्नेह में ग्रसित पति मुनिराज का स्थितिकरण करने की उधेड़बुन में लग जाती। अगले दिन वह अपनी पड़ौसिन व उसके बेटे को लेकर मुनिराज के पास पहुँची नमस्कार करके तीनों बैठे ही थे कि मुनिराज ने नागला के बारे में पूछना शुरू कर दिया वे नागला को पहिचान नहीं पाये क्योंकि साधारण वेश एवं व्रतोपवास से उसकी काया क्षीण हो गई थी। इतने में ही सहेली के बेटे को अचानक उल्टी हो गई थी। वह उल्टी करके खेलने लग गया। वे दोनों मुनिराज से तत्त्व चर्चा कर रही थी मगर मुनिराज बार–बार नागला का जिक्र कर रहे थे। इतने में बालक आया और कहने लगा कि माँ भूख लगी है सुनकर नागला बोली बेटा जो तूने उल्टी की उसमें जो अन्न निकला उसे ही खा लो। यह सुनकर मुनिराज बोले कैसी माँ हो वमन खाने को कह रही हो नागला बोली आप कैसे मुनिराज हो जो त्यागी हुई पत्नि से बार – बार मिलने का इजहार कर रहे हो आप भी तो वमन करके खाने की कोशिश कर रहे हो मैंने बालक को कह दिया तो इसमें बुराई क्या है? मुनिराज को समझ में आ गया कि मैं अपने पद से च्युत हो रहा था इसने मेरा स्थितिकरण किया और फिर जंगल में जाकर साधना करने लगे। बाद में उसने बताया कि वह ही नागला है।

तो पत्नि भी गुरु हो सकती है उसने एक गुरु का काम किया स्वयं अपने व्रतों में अडिग रही और मुनिराज का भी स्थितिकरण किया।

**कहते हैं गुरू दर्पण हैं –** आप एक दर्पण लीजिए और उसके सामने एक दीपक जला कर रख दीजिए अब देखिए कि दीपक की रौशनी कई गुनी होकर दर्पण में प्रकाशित होती है। उसी प्रकार गुरु रूपी दर्पण परमात्मा रूपी दीपक की रोशनी को अपने में सहेजकर उसे कई गुणा प्रकाशित और सुन्दर करके बिखेरते हैं। गुरु परमात्मा की रोशनी से चमकते हैं। एक कवि ने लिखा है –

**बना गुरुवर का घर दिल में जो अपने साथ रखता है,**
**समझ लो वो अमावस में ही चंदा साथ रखता है।।**
**खुदा के रूप में मुझको गुरु आता नजर यारो,**
**उठा नजरें वो जब मेरे सिर पर हाथ रखता है।।**

**गुरु चाँद हैं–** ***''गुरु अमावश की रात में पूनम का चाँद हैं*** समाज के शीश पर सौभाग्य का सिंदूर है''। यूँ समझें कि हम डायरेक्ट सूर्य को कभी नहीं देख सकते आँखों में उतनी शक्ति नहीं इसलिए चन्द्रमा की रौशनी को ग्रहण तो करते हैं। सूर्य की रौशनी में तो तपन भी है जबकि चन्द्रमा की रौशनी में शीतलता। सूर्य को हम लगातार देख नहीं सकते जबकि चंद्रमा को देख सकते हैं। चंद्रमा सूर्य की रौशनी से चमकता है मैं भी कहता हूँ कि गुरु में अपनी कोई रोशनी नहीं है वे तो प्रभु की रौशनी लेकर चमकते हैं और चन्द्रमा की सी शीतल चाँदनी बिखेरते हैं।

प्रभु का साक्षात् मिलना इस काल में संभव नहीं पर गुरु आज साक्षात् देखने को मिलते हैं, आप भी उनसे साक्षात् मिलते हैं। तभी तो उन्हें तीर्थंकर के लघुनन्दन कहते हैं। गुरु चलता फिरता बोलता मन्दिर है, परमात्मा का दूत और मंजिल का राही है।

**''सूरज जितना प्रखर है चाँद उतना ही मधुर''**

गुरु को हम **पूर्णिमा का चाँद** भी कहते हैं, गुरु को

चाँद इसलिए भी कहा है कि चाँद अमावस जैसी काली रात में गुजरकर आता है और गुरु भी संसार रूपी अंधकार से गुजर कर बाहर आये हैं। यह सच है कि इस पंचम काल में जितने भी प्राणी जन्म लेंगे सभी मिथ्यात्व को साथ लेकर आयेंगें। पर गुरु एक ऐसे है जो अपने मिथ्यात्व को सम्यक्त्व में बदल देते हैं यानि आते तो अंधेरे में हैं पर जाते उजाले में हैं। इनका जन्म तो अंधकार में हुआ, संसार के दल–दल में हुआ, रागद्वेष कषायों के बीच हुआ पर इन्होंने अपने जीवन में प्रभु की भक्ति रूपी उजाले को भरकर जीवन को सफल बना लिया, समाधिमरण करके जीवन को प्रकाश से भर दिया। आये तो अंधेरे में थे पर गये उजाले में हैं और हमेशा उजाले में रहेंगे और एक बात है कि चाँद अपनी पूरी 12000 किरणें पूर्णिमा के दिन ही बिखेरता है सारी दुनियाँ को प्रकाशित करता है इन किरणों से दुनियाँ के अंधकार को नष्ट कर देता है वैसे ही गुरु रत्नत्रय रुपी अपनी किरणों से समस्त संसारी प्राणियों के अज्ञान अंधकार को नष्ट कर देते हैं।

एक बात पर आपने ध्यान दिया होगा कि चाँद रात्रि में ही क्यों निकलता है? दिन में क्यों नहीं? क्योंकि सूर्य के सामने चाँद फीका पड़ जाता है और गुरु परमात्मा के सामने क्योंकि परमात्मा संपूर्ण है और गुरु उस परमात्म दशा को पाने का प्रयास कर रहे हैं इसलिए परमात्मा के सामने अपने को प्रमुखता नहीं देते कहा भी है–

**''भगवान बैठा हुआ मुनि है और मुनि चलता हुआ परमात्मा** इसलिए गुरु परमात्मा की परछाईं कहे जाते हैं और उनकी रौशनी से समस्त संसार में ज्ञान रूपी रौशनी बिखेरते हैं। **गुरू थ्री इन वन हैं भगवान वन वे** कोई पूछे कि वो कैसे? तो ऐसे कि परमात्मा की प्रतिमा को देखकर मात्र सम्यक्त्व हो सकता है मगर गुरु की मुद्रा परमात्मा की तरह है सो मुद्रा देखकर सम्यग्दर्शन की, उनका उपदेश सुनकर सम्यग्ज्ञान की और आचरण से सम्यक् चारित्र की प्राप्ति होती है। गुरु एक हैं और तीन रत्नों को दिलाते हैं इसलिए कहा है कि **गुरु थ्री इन वन हैं और भगवान वन वे**

**गुरु परमात्मा के एजेण्ट हैं –** गुरु हम सभी के बीच आकर परमात्मा का स्वरूप धारण कर उस रुप से

अवगत कराते हैं। जिस प्रकार एक एजेण्ट अनेक शहरों में जाकर अपनी कम्पनी की वस्तुओं को दिखा–2 कर सर्वश्रेष्ठ बताता है वस्तु से उसके गुणों से परिचय कराता है। गुरु भी भव्य जीवों के बीच आकर परमात्मा का रूप दिखाते हैं जिनवाणी का स्वरूप बताते हैं प्रभु से कॉण्टेक्ट कराते हैं। वे कहते हैं –

**जिनवाणी के हीरे मोती मैं बिखराऊँ गली–गली**
**ले लो रे कोई वीर का प्यारा शोर मचाऊँ गली–गली**

वे नगर–नगर गाँव–गाँव जाकर के लोगों को जगाते हैं उन्हें संसार से पार उतरने की कला सिखाते हैं
गुरू के लिए कहा भी है –

**गुरु ब्रह्मा गुरु शंकर हैं, गुरु ही विष्णु हितंकर है,**
**गुरुवर ही तीर्थंकर हैं – 2**
**गुरु धरती सम अम्बर हैं गुरु ही परम दिगम्बर हैं,**
**गुरु से जीवन में हो ऽऽऽ ,खुश्बू भर जाये रे ऽऽऽ।।**

किसी शिष्य ने पूछा गुरु को ब्रह्मा, विष्णु, महेश, शंकर क्यों कहा? शिष्य तो अबोध होते हैं, कम ज्ञान होता है और जिज्ञासा अधिक इसी कारण कहा है **स्पमि पे कवमेदश्ज इमहपद ूपजीवनज ं चतमबमचजवत बिना गुरु के जीवन शुरू नहीं होता,** बुद्धि का विकास नहीं होता, व्यक्तित्व का निखार नहीं होता, कई जीवन्त प्रश्न जीवन के उलझे ही रह जाते हैं। तो शिष्य के प्रश्न का उत्तर देते हुए बताया कि गुरु ''ब्रह्मा'' हैं क्योंकि व्यक्ति का जन्म दो बार होता है। एक माँ के गर्भ से दूसरा गुरु के सानिध्य से । **जीवन में तीन 'म' का बड़ा ही महत्व है। बचपन में माँ का, जवानी में ''महात्मा' का और बुढ़ापे में ''जिनवाणी माँ का।** जब गुरु का चरण सानिध्य मिलता है और उनका उपदेश व आचरण जीवन में उतरता है तो जिंदगी नया मोड़ लेती है और वही नयापन नया जन्म कहलाता है।

माँ तो केवल जन्म देती है लेकिन गुरु उस जन्म को सँवारते हैं, जीने की कला सिखाते हैं। कहा भी है –

**माँ ने तन को जन्म दिया, गुरु ने जीवन दान दिया–2**
**प्रभु ने आतम जन्म दिया –ऽऽऽ**
**माँ से बाहर आँख मिले गुरु से अन्तस् आँख मिले–2**
**गुरु ही जीवन को हो ऽऽ वरदान बनायें रे ऽऽऽ**

**माँ संस्कार देकर उसी जीवन का सुधार करती है पर गुरु सुसंस्कार देकर आचरण देकर भव–भव सुधार देते हैं।** माँ ने इस शरीर को जन्म दिया और बाहर देखने वाली दो आँखें दी हैं जिससे केवल संसार, विषय भोग, पर वस्तु को ही देखा जाता है पर ही नजर आता है। परन्तु गुरुवर के द्वारा जो आँख मिली है उससे अन्तस् बाह्य दोनों का ज्ञान होता है, स्व और पर का विवेक जागृत होता है, संसार को देखकर उसकी नश्वरता का भान होता है, स्वयं में रमण करने की प्रवृत्ति जागृत हो उठती है और अपने जीवन में एक जीवन्त चिराग जलने लगता है। अजर–अमर पथ की ओर प्रयाण होने लग जाता है।इस नये जीवन का निर्माण गुरु के द्वारा ही होता है इसलिए गुरु को ''ब्रह्मा'' कहा जाता है। गुरु नया जीवन देकर दृष्टिकोण ही बदल देते हैं, लक्ष्य ही बदल देते हैं कहा है –ँपदज बींदहमे अपेपवद दवज`बमदम इनज`पहीज संत या गुरु दृश्य नहीं दृष्टि बदल देते हैं।

**गुरू शंकर हैं।** कैसे? वैष्णव धर्म में शंकर को त्रिनेत्र वाला कहा गया है।जब उनकी तीसरी आँख खुलती है तो विध्वन्स होता है, नाश होता है। उसी प्रकार गुरु त्रिनेत्र वाले होते हैं जो स्व और पर का विवेक जागृत कर लेते हैं और विवेक जागृत होने पर जो ज्ञान किरण फूटती है उससे कर्म रूपी पर्वत का सतत विध्वंस करते हैं, कर्म कलंक मिट जाता है।**यही आत्मज्ञान की चरम सीमा है केवलज्ञान।** इसीलिए गुरु शंकर है।

शंकर का दूसरा अर्थ भी है। शंकर दो शब्दों का मेल है शं+कर, शं=सुख , कर=करना यानि जो सुख करे, सुख दे सुख में लगाये वह शंकर है और गुरु संसार के दु:खों से निकालकर परमार्थ सुख में लगाते हैं अत: गुरु शंकर हैं।

**गुरू विष्णु हैं –** आप सभी को जानकारी

तो है ही कि विष्णु संसार के सभी प्राणियों का पालन पोषण करते हैं (वैष्णव मान्यतानुसार) उनकी जरूरतों पर ध्यान देते हैं उसी प्रकार जो गुरु के चरणों में अपने आप को समर्पित–अर्पित कर देता है उनके चरणों में रहकर उनकी सेवा करके जीवन यापन करने लगता है तो गुरु भी अपने शिष्य का बालकवत् लालन–पालन करते हैं। उसके सुख दुःख का ध्यान रखते हैं। मुझे याद आ रहा है गुरु और शिष्य का वह प्रसंग जिससे हमें एक प्रेरणा मिलती है गुरु चरणों में समर्पण की।

प्राचीन काल में बालक गण अपने गृह से दूर गुरुओं के पास आश्रम में रहकर शिक्षा ग्रहण करते थे गुरु उनके सुख दुःख का ख्याल रखते थे। किसी एक आश्रम में गुरुजी अपने शिष्य को विशेष आत्मिक स्नेह देते थे। एक दिन गुरु माँ ने गुरुजी से पूछा कि इस आश्रम में तो बहुत सारे बालक है फिर इन सब में से आप एक को ही सर्वश्रेष्ठ क्यों बताते हो क्या यह पक्षपात नहीं? होता भी ऐसा है कि अपना–2 पुण्य होता है समर्पण होता है जिसका जितना समर्पण होता है उसे उतना प्रेम व अपनापन मिलता है। गुरु माँ की बात सुनकर गुरु जी बोले वह बालक सबसे भिन्न है चाहो तो परीक्षा करके देख सकती हो। परीक्षा की युक्ति लगाई गई। गुरुजी ने एक पका हुआ आम अपनी बाजू पर बाँध लिया और दर्द से कराहने लगे। गुरु जी के कराहने की आवाज सुनकर सभी बालक एकत्रित हो गये और पूछने लगे कि गुरुजी को अचानक क्या हो गया गुरुजी तो दर्द से तड़प रहे थे तब गुरु माँ बोली इनको अचानक बहुत बड़ा फोड़ा हो गया है जो बहुत जहरीला है यह ऐसे नहीं फूटेगा इसकी मवाद चूस कर निकालने पर ही यह ठीक होगा क्या तुम लोगों में से कोई यह काम कर सकता है? जो अपने गुरु जी को दर्द से छुटकारा दिला सके। सुनकर सभी बालकों ने अपना–2 सिर नीचे झुका लिया लेकिन बालकों की भीड़ से वह बालक जिसे गुरुजी बहुत प्यार करते थे निकलकर आया और बिना कुछ कहे फोड़ा चूसने लगा। फिर क्या था गुरु माँ के समझ में आ गया कि गुरूजी इसे सबसे ज्यादा क्यों चाहते हैं। गुरु जी ने बालक को अपने हृदय से लगा लिया और गुरु माँ से बोले अब आया समझ में कि मैं पक्षपात करता हूँ ? कहने का तात्पर्य यह है कि जब हम पूर्ण रूपेण स्वयं को गुरु चरणों में समर्पित कर देते

हैं तब गुरु भी हर पल हमारा सुख दुःख का ध्यान रखते हैं। कहा भी है **– याद गुरुवर हमें कर लें महासौभाग्य है यारो।**

**गुरू तीर्थंकर हैं –** जिससे तिरा जाय उसे तीर्थ कहते हैं। जो संसार सागर से तिराये उसे तीर्थ कहते हैं। एक भजन के माध्यम से किसी ने कहा है –

**''जहाँ धीर (हृदय) को मिले शान्ति वही तीर्थ स्थान है।''**

जहाँ हृदय को शान्ति मिले, कषायों में मन्दता आये, परिणामों में विशुद्धि बढ़े वही तीर्थ स्थान है फिर वह मन्दिर हो, मस्जिद हो, गुरुद्वारा हो, घर हो, दुकान या श्मशान हो।

जब गुरुओं के पास जाते हैं उनकी समता को साम्यभाव को देखते हैं उनके परिणामों की विशुद्धता को देखते हैं तो हमारे भी परिणाम निर्मल होने लगते हैं, हमें भी संसार शरीर और भोगों से विरक्ति होने लगती है, परिणामों में विशुद्धि बढ़ने लगती और कषायों में मन्दता आने लग जाती है। और हमारे अन्दर अनादि से छिपी हुई, सोई हुई तिरने की कला जागृत हो उभरने लगती है इस प्रकार गुरू तीर्थ हैं और ''जो स्वयं तिरते हैं तथा दूसरों को तिराते हैं वे तीर्थंकर कहलाते हैं।'' हमारे गुरु मोक्ष मार्ग पर स्वयं चलकर हमें भी उसी मार्ग पर चलने का, संसार के दुःखों से छूटने का उपदेश देते हैं। आज हमारा दुर्भाग्य है जो हमें साक्षात् तीर्थंकर के दर्शन नहीं हो सकते परन्तु सौभाग्य भी कम नहीं जो तीर्थंकर के लघुनन्दन कहे जाने वाले उनके मार्ग पर चलने वाले, उन्हीं के सम उपदेश देने वाले, स्वयं मोक्षमार्ग पर चल कर दूसरों को भी उसी मार्ग पर चलने की शिक्षा देने वाले निर्ग्रन्थ दिगम्बर मुनिराजों के दर्शन सुलभ हैं। कई ऐसी अध्यात्म जगत की महान हस्तियाँ हुई हैं जिन्होंने अपने काव्य को अध्यात्म से, मुनि की चर्या व उनकी महिमा से लबालब भर दिया। जैसे पं.बनारसीदासजी, पं. दौलतरामजी आदि इन्होंने अपनी लेखनी से मुनिचर्या का वर्णन बहुत अच्छे ढंग से किया मानो उस चर्या का स्वयं ही निर्वाह करके, अनुभूत करके काव्य मय कर दिया हो लेकिन दुर्भाग्य उनके दोनों नयन जीवन भर उस वीतरागी निर्ग्रन्थ दिगम्बर रूप को देखने के लिए तरसते रहे। पं.बनारसी दास ने तो

उस अवस्था को अनुभूत करना भी चाहा और तीन दिन तक घर में निर्वस्त्र रहे दीक्षा तो ली नहीं थी जो चर्या के लिए निकलते इसलिए निराहार रहे जब शरीर को सहन नहीं हुआ तो अनायास ही मुख से निकल पड़ा कि

**भयी बनारसी की दशा जैसे ऊँट को पाद**

हमारा सौभाग्य ही नहीं परम सौभाग्य और महाभाग्य है जो इस भौतिक वादी विलासी युग में तीर्थंकर के बताये मार्ग पर चलने वाले और भव्य जीवों को उसी राह का पथ निर्देशित करने वाले गुरु मिले, उनकी चरण रज मिली जिससे संयमित आचरण की ओर कदम बढ़ाया जा सके। इसलिए तो पहले भी कहा कि **Life does not begin without a preceptor गुरु के बिना जीवन शुरू नहीं होता –**

गुरु के बिना जीवन शुरू करना वैसे ही है जैसे समन्दर में नाव तो है पर खेवटिया नहीं, पत्थर तो है पर शिल्पी नहीं, मिट्टी है लेकिन कुम्भकार नहीं, पानी, ईंट, रेत, सीमेण्ट तो है पर कारीगर नहीं। अतः साध्य की साधना असंभव है। शास्त्र कहे परमात्मा है पर शास्त्र में क्या है? शास्त्र का स्वरूप कैसा है? और परमात्मा का रूप कैसा है? यदि वह बताने वाले सद्गुरु हमारे जीवन में नहीं हैं तो हमारा जीवन बेकार है। **जिस प्रकार पानी के बिना नदी बेकार है, प्रेम न हो तो परिवार बेकार है, अतिथि के बिना आँगन बेकार है, पैसा न हो तो पॉकेट बेकार है, पति न हो तो पत्नि का श्रृंगार बेकार है, प्रतिमा नहीं तो मंदिर बेकार है, बच्चे नहीं तो धन–दौलत बेकार है, इंजन नहीं तो गाड़ी बेकार वैसे ही जीवन में सद्गुरु नहीं है तो जीवन बेकार है। जीवन बुलबुले की तरह है कब फूट जाये, ओस की बूँद की तरह कब सूख जाये, सूखे पत्ते की भाँति है कब टूट जाये, बिजली की तरह है कब चमक जाये, इन्द्र धनुष की तरह है कब विलुप्त हो जाये, जीवन वन का फूल कब मुरझा जाये, कब जीवन की सांझ ढल जाये।** मैं तो कहता हूँ सभी के जीवन में एक गुरु अवश्य होना चाहिए फिर वह **एकलव्य की तरह माटी का गुरु ही क्यों न हो।**

जीवन जब तक प्रकाश से दूर अंधकारमय रहता है, तब तक जीवन रूपी कमल कभी नहीं खिल सकता है, सम्यक्त्व का बीज अंकुरित नहीं हो सकता, सम्यग्ज्ञान की किरण उपलब्ध नहीं हो सकती, चारित्र और आचरण उज्ज्वल नहीं हो सकता अर्थात् जीवन धर्ममय, प्रेममय, आनन्दमय और आचरणमय नहीं हो सकता गुरु के आशीर्वाद की किरण ही जीवन को बनाती है।

जीवन में संस्कारों की सुगन्धि, बुद्धि और व्यक्त्वि का विकास तथा विनम्रता का गुण गुरु के आशीर्वाद से ही प्रकट होता है। कहा भी है –

**गुरु के बिना अधूरा है, माटी जैसा चूरा है–2**
**जीवन लगता कूरा है ऽऽऽ**
**गुरु ही यत्न कराते हैं, तीनों रत्न दिलाते हैं–2**
**गुरु ही सागर से हो ऽऽ तट पर ले जायें रे ऽऽऽ**
**गुरु चरणों की धूलि हमें जब मिल जाये रे–ऽऽऽ**
**उसकी दुनियाँ में – हो–3 किश्मत खुल जाये रे–ऽऽऽ**

गुरू रूपी सूरज की किरण जिस प्राणी के जीवन रूपी कमल पर पड़ जाती है उसका व्यवहार, विचार, आदत, वाणी सुन्दर व मधुर हो जाती है, दया ह्रदय में उद्घटित होने लगती है, उसका मानसिक स्तर ऊँचा होने लगता है इसलिए तो कहा है –

**गुरुवर से कल्याण हो, गुरु से ही शुभ ध्यान हो–2**
**गुरुवर से सम्मान हो ऽऽऽ**
**गुरुवर से सद्ज्ञान हो, गुरु द्वारा निर्वाण हो–2**
**गुरु की कृपा से हो ऽऽ हम मौज उड़ायें रे ऽऽऽ**
**गुरुवर का आशीष हमें जब मिल जाये रे ऽऽऽ**

जीवन में सद्‌गुरु का होना बहुत जरूरी है जिसके ह्रदय कमल में सद्‌गुरु का आगमन हो जाता है जो ह्रदय कमल में गुरू को बिठा लेता है उसका जीवन ''सत्य शिव और सुन्दर बन जाता है। ह्रदय का आँगन पावन और पवित्र हो जाता है। गुरु हमें जीने की कला सिखाते हैं। वे ही हमें परमात्मा से परिचित कराते हैं तभी तो

कहा है ''**गुरू द्वार है परमात्मा का**'' गुरु सेतु हैं जो शिष्य को संसार समुद्र से हाथ पकड़कर परमात्मा के द्वार तक पहुँचा देते हैं। वे ही हमें संसार के चक्रव्यूह को तोड़कर उसमें से सुरक्षित निकलने की विद्या सिखाते हैं, सत्य की राह पर चलना सिखाते हैं और सच्चे आनन्द की अनुभूति कराते हैं। हँसना, मुस्कुराना वे ही सिखाते हैं संसार की सारी खुशी गुरु चरणों में मिलती है।

किसी व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति से पूछा तुम बार–बार मन्दिर व महाराज के पास क्यों जाते हो? जब देखो तब वहीं बैठे रहते हो आखिर क्या मिलता है वहाँ? व्यक्ति थोड़ा मुस्कुराया और बोला **मुझे वहाँ पर जो मिलता है वह कहीं नहीं मिल सकता है।** त्याग तप की बातें, इन्द्रिय को वश में करने की शिक्षा, कषायों की मंदता, भावों की विशुद्धता और परमार्थ की राह मिलती है। गुरु ही हैं जिनकी प्रेरणा से, सत्संग से, समागम से, उनकी छत्रछाया में बैठने से, उनकी सेवा करने से जीवन का उद्धार होता है। स्वर्ग क्या मोक्ष मंजिल की प्राप्ति हो जाती है। एक दृष्टान्त याद आ रहा है–

एक संत गाँव से बाहर दूर जंगल में तपस्या करते थे एक दिन भिक्षा माँगने शहर की ओर प्रस्थान किया एक घर मिला रास्ते में देखकर आवाज लगाई भिक्षामि् देहि! घर में मालकिन पड़ी आराम फरमा रहीं थीं दूसरी आवाज लगाई भिक्षामि देहि! अन्दर से आवाज आयी! अरे ये सुबह –सुबह कौन जोर–जोर से चिल्ला रहा है आ जाते हैं भूखे नंगे इतना कहकर फिर सो गयी पुनः फिर से आवाज आयी भिक्षामि देहि! सेठानी बड़ी क्रोध में आई जोर से चिल्लायी क्यों चिल्ला रहे हो संत ने कहा कुछ भिक्षा मिल जाती तो पेट की क्षुधा समाप्त हो जाती। सेठानी ने गाली–गलौच कर भगा दिया जाते हो या नहीं धक्के मारकर भगाऊँ, संत गाली को गीत समझकर बड़ी ही प्रसन्नता से वापिस चला गया संत होते ही ऐसे हैं मिले तो बाँटकर खाये, न मिले तो भूखा सो जाये, भगवान को शुक्रिया अदा करते हुये वापिस चला गया दूसरे दिन संत उसी घर के सामने खड़ा होकर आवाज लगाने लगा भिक्षामि देहि! सेठानी ने जैसे ही आवाज सुनी आव देखा न ताव झाड़ू लगा रही थी वही कचरा लेकर संत के कटोरे में डाल दिया संत ने देखा बड़ा ही प्रसन्न हुआ बोला माँ आज तुमने

जो कचरा दिया है मैं उसे कलाकंद बना दूँगा संत वही हैं जो गाली का जवाब गाली से नहीं कचरे का जवाब कचरे से नहीं, अपमान का बदला अपमान से नहीं, प्रहार का बदला प्रहार से नहीं, झूठ का बदला झूठ से नही, पाप का बदला पाप से नहीं तलवार का बदला तलवार से नहीं देते। संत तो वह होते हैं जो गाली का जवाब गीत से, कचरे का जवाब कलाकंद से, अपमान का जवाब प्यार से देते हैं ऐसे ही वह संत थे जिनकी वाणी से फूल झरते थे, संत ने कहा माँ! मैं इस कचरे को मिठाई समझकर खाऊँगा सबको खिलाऊँगा, माँ अब मैं चलता हूँ मैं तुम्हारा ये उपकार कभी नहीं भूलूँगा।

**संत को न भोजन दे जो स्वयं ही खाता है**
**इस जहाँ में कीड़े सा जीता बिलबिलाता है।**

संत चला गया सेठानी ने जैसे ही माँ शब्द सुना हृदय परिवर्तित होने लगा रोम–रोम पुलकित हो गया, माँ की ममता जाग गयी, जोर–जोर से विलाप करने लगी, बेटा–बेटा शब्द गुंजायमान होने लगा, बेटा तुम कहाँ हो मुझे छोड़कर कहाँ चले गये सेठजी ने देखा और पूछा क्या बात है क्यों रो रही हो सेठजी ने इसके पहले कभी भी रोते हुये नहीं देखा था। सेठजी ने बड़े ही प्यार से पूछा ये बेटा–बेटा क्यों चिल्ला रही हो कौन सा बेटा? तुम्हारे कोई संतान नहीं है तुम किसी की माँ नहीं हो फिर क्यों पागलों की तरह चिल्लाती हो? अरे तुम्हें नहीं मालूम अभी मेरा बेटा आया था मैंने उसे गाली और कचरा देकर मारकर भगा दिया सेठानी ने संत की सारी बात बतायी। सेठजी सुनकर चिन्तित हो गये ये तो बहुत बुरा हुआ तुमने घर आये संत को, मेहमान को धक्के मारकर भगा दिया अरे जानती हो घर में संत के आने का मतलब क्या होता है जैसे कल्पवृक्ष का आना, कामधेनू का आना, चिंतामणी रत्न का आना। संत आये तो उनके साथ ये सब आये संत चले गये ये सब साथ चले गये। सेठानी जोर–जोर से बिलखने लगी प्रभु से प्रार्थना करने लगी हे भगवान आप ही कुछ रास्ता बताइये।

सेठजी ने कहा मत रोओ कल हम ससम्मान संत को भोजन करायेंगे उनका आदर सम्मान करेंगे हम दोनों द्वार पर उनका

इंतजार करेंगे सेठानी सुनकर खुश हो गयी। सेठानी को तुरन्त संत की बात याद आयी जाते–जाते संत ने कहा था कल तुम स्वयं द्वार पर मेरा इंतजार करोगी। आज तुम मुझे कचरा दे रही हो कल मुझे मिठायी खिलाओगी, आज तुम मेरा अपमान कर रही हो कल तुम मेरा सम्मान करोगी, दूसरे दिन दोनों द्वार पर खड़े–खड़े इंतजार करने लगे कब संत आये और स सम्मान अन्दर ले जाकर भोजन करायें थोड़ी ही देर बाद संत आ गये दोनों संत को बड़े ही आदर, विनयपूर्वक स सम्मान घर के अंदर ले गये कई प्रकार के व्यंजन परोस दिये बड़े ही मन से भोजन कराया। कहा है –

**साधुओं को भोजन दे बाद में जो खाता है**
**वो हमेशा दुनियाँ में खुश हो खिलखिलाता है**

वो ही सच्चा धर्मी है, वो हि सच्चा ज्ञानी है जो संतों को आहार देकर भोजन करते हैं। दोनों ने नियम लिया **आज से किसी न किसी संत को भोजन कराके ही भोजन करूँगा** संत उस दिन जंगल की ओर चले गये। दोनों ने संत को भोजने कराने के बाद आराम से भोजन किया। सेठानी ने कहा आज मैं बहुत खुश हूँ आज मेरी कोख धन्य हो गयी आज मैंने अपने बेटे को अपने हाथ से परोसकर भोजन कराया अब मैं रोज भोजन कराऊँगी। दोनों सो गये, तीसरे दिन दोनों फिर संत की प्रतीक्षा करने लगे पर संत नहीं आये सुबह से शाम हो गयी दोनों का बुरा हाल हो गया भूख के कारण वेदना होने लगी पूरा दिन व्यतीत हो गया पर संत नहीं आये। उन्हें याद आया संत जंगल की तरफ गये थे, दोनों जंगल की तरफ रवाना हुये भूखे, प्यासे चलते–चलते थक गये बेहोश होकर गिर पड़े वहीं पर देखा संत ध्यानस्थ थे। संत ने आँखें खोलीं देखा दोनों का बुरा हाल था पूछा ये तुम्हारा हाल कैसे हुआ? बताया आज सुबह से रात्रि हो गयी तुम्हारे इंतजार में, पर तुम नहीं आये संत मासोपवासी थे एक माह में केवल एक बार ही आहार लेते थे। संत ने कहा अब तुम दोनों की जिंदगी के कुछ क्षण ही शेष बचे हैं इसलिए प्रभु की भक्ति आराधना करो चारों प्रकार के आहार जल का त्याग करो तभी तुम्हारा ये भव सुधर सकता है दोनों का बुरा हाल था, लेकिन संत के

वचनों पर विश्वास था। **दोनों अन्न जल का त्याग कर पंचपरमेष्ठी मंत्र का स्मरण करने लगे। कुछ ही समय में समाधिपूर्वक मरण को प्राप्त कर स्वर्ग में देव हुए। दोनों का कल्याण हो गया उद्धार हो गया** अगर संत न आते तो संसार में ही भटकते होते चौरासी के चक्कर ही लगाते रहते। संत ही हैं जो हम अज्ञानी प्राणियों का कल्याण करते हैं कहा भी है –

**संत न होते जगत में तो जल जाता संसार–** ये संत नहीं होते तो क्या होता हमारा कल्याण कैसे होता हमारा उद्धार नहीं हो पाता संत ही हैं जो आकर हमें जगाते हैं जगाकर प्रेरणा देते हैं और हमारे जीवन का उद्धार कर देते हैं इसीलिए कहते हैं–

**उद्धार कैसे होता हमारा, अगर तुम न आते**
**गुरुजी तुम्हारा सहारा न मिलता**
**भंवर में ही रहते किनारा न मिलता**
**दिखाई न देती मोक्ष की मंजिल अगर तुम न आते**

जिस प्रकार सूर्य की किरण आते ही कमल खिल जाते हैं उसी प्रकार रत्नत्रय से भीगे गुरुवर की मीठी–मीठी मुस्कान से इस संसार रूपी तालाब में भव्य प्राणी रूपी कमल स्वतः ही खिल जाते हैं।

**कहते हैं गुरु दीवार नहीं द्वार है परमात्मा का,** जहाँ भक्त और भगवान का मिलन ही नहीं महामिलन होता है। गुरु वे हैं जो अनन्त संसार का अंत करा दे – बिन्दु को सिंधु बना दें, पतित को पावन बना दें, शैतान को इंसान बना दें, रोते हुए को हँसना सिखा दें, रोगी को निरोगी बना दें, जहर को अमृत बना दें और पत्थर को परमात्मा बना दें।

**ये रंग बदल कर तश्वीर बदल देते हैं,**
**कमान से निकला तीर बदल देते हैं।**
**इतनी शक्ति है गुरुवर के श्री चरणों में,**
**कि ये इंसान की तकदीर बदल देते हैं।।**

जिसके सिर पर गुरुओं का आशीर्वाद रहता है वह

एक दिन संसार सागर से भी पार होता है। गुरु के दो शब्द जिसे सुनने को मिल जाते हैं संसार में उसके समान खुशनसीब कोई और नहीं है इसीलिए तो कहा है **गुरु कर दे करम जिस पर वो भव से पार होता है।**

**गुरू परम हितैषी हैं –** क्योंकि वे हमें अज्ञान अंधकार से निकाल प्रकाश की ओर ले जाते हैं मिथ्यात्व से हटा सम्यक्त्व में बिठा देते हैं अधर्म के मार्ग से धर्म की ओर मोड़ देते हैं, पाप से निकाल कर पुण्य में ले जाते हैं इसलिए गुरु परम हितैषी हैं।

**गुरु वैद्य हैं –** एक बार एक मुनिराज जंगल में तपश्चरण कर रहे थे पूर्व पाप कर्म के उदय से उनके शरीर में कुष्ठ निकल आया रास्ते में एक वैद्य गुजर रहा था उसने देखा मुनिराज को भयंकर रोग हुआ है वह गाँव के श्रेष्ठी श्रावक को लेकर आया और मुनिराज से ध्यान भंग करने की प्रार्थना की जैसे ही मुनिराज ने आँखें खोली तो वैद्य बोला गुरुदेव आप को भयंकर रोग हुआ है मैं इसका निदान करना चाहता हूँ कृपया मुझे मेरा कार्य करने की आज्ञा प्रदान कीजिए। मुनिराज बोले हे वैद्यवर! यह रोग तो कुछ भी नहीं है मुझे इससे भी भयानक तीन रोग और हैं अगर तुम उनको मिटा सकते हो तो मिटा दो। वे रोग हैं **''जन्म, जरा और मृत्यु''** इन रोगों के आगे तो यह रोग बहुत तुच्छ है कुछ समय से है पर ये तीन रोग तो मुझे अनादि से लगे हुए हैं, इनका निदान कर सकते हो तो करो। सुनते ही वैद्यराज चरणों में गिर जाता है, कहता है गुरुदेव! इन रोगों का निवारण तो आप ही कर सकते हैं हम जैसे तुच्छ प्राणी नहीं। सच है निर्ग्रन्थ गुरु ही हैं जो हमें अनादि से लगे रोगों की दवा रत्नत्रय प्रदान करते हैं। ऐसा नहीं कि वे कोई गोली, पाउडर या पुड़िया देते हैं उनकी तो नजर ही काफी है। भक्तामर स्तोत्र में 48 छन्दों की जाप में ऋद्धिधारी मुनिराजों को प्रणाम किया गया है और एक–2 ऋद्धि का वर्णन करते हुए बताया गया है कि ऐसे मुनिराजों की मात्र दृष्टि पड़ जाने पर रोग दूर हो जाते हैं ऐसे–2 महामुनिराज हैं जिनके कफ, मल, मूत्र आदि भी औषधि बन जाते हैं जिनकी चरण रज से भयानक से भी भयानक रोग मिट जाते हैं साथ ही जन्म, जरा, मृत्यु जैसे महाभयंकर रोग भगाने की दवा और दुआ गुरुवरों से ही मिलती है।

**गुरु पारखी हैं –** एक बार एक गरीब लड़का जंगल गया वहाँ उसे एक निर्ग्रन्थ संत आत्मध्यान में लीन दिखे। उसने देखा कि इनके पास तो कुछ भी नहीं कपड़े भी नहीं फिर भी वह इतने प्रसन्न दिखाई दे रहे हैं देखना चाहिए ये क्या करते हैं वह लड़का वहीं जंगल में रहकर उनकी साधना का निरीक्षण करता रहा। दूसरे दिन मुनिराज उठे आहार चर्या को निकले वह लड़का भी उनके पीछे–2 चल दिया। एक सेठ के यहाँ मुनिराज का आहार हुआ वह दूर खड़ा होकर सब कुछ बड़े गौर से देख रहा था। जब मुनिराज का आहार हो चुका तो वे जंगल की ओर आ गये और श्रावकों ने मुनिराज के साथ कोई ब्रह्मचारी होगा ऐसा समझकर उस लड़के को भोजन कराया। भोजन करके वह सोचने लगा कि ये बाबा कुछ भी नहीं करते हैं फिर भी इन्हें इतना अच्छा भोजन मिलता है क्यों न इन्हीं के संग रह जाऊँ। वह भी जंगल में जाकर मुनिराज के पास बैठ गया दूसरा दिन हुआ। मुनि तो मासोपवासी थे वे आहार चर्या को नहीं उठे लड़के ने सोचा क्यों न इनके पीछी कमण्डल लेकर इनके जैसी चर्या की जाये और वह वस्त्र उतारकर पीछी कमण्डल लेकर गाँव की ओर चल दिया वहाँ लोगों ने मुनिराज समझकर नवधा भक्ति पूर्वक आहार दिया और आहार लेकर जंगल की ओर चला आया और पीछी कमण्डल मुनिराज के पास रख दिया जब मुनिराज ध्यान से उठे उस बालक पर नजर डाली तो बोले अब तुम्हें मुनिव्रत धारण कर लेना चाहिए तुम्हारी उम्र मात्र तीन दिन की शेष बची है अगर अपना जन्म सुधारना चाहते हो तो मेरी बात मान लो उस बालक ने गुरुवर की बात मान ली और गुरुवर के द्वारा जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर ली और इस संसार को असार समझ कर तीन दिन की सल्लेखना लेकर सभी प्रकार के आहार का त्याग कर ध्यान में बैठ गया तीन दिन बाद उनकी समाधि हो गई और जीवन सुधर गया तभी तो शिष्य गुरु से कहता है –

**मेरा है कोरा जीवन लिख दो कोई कहानी**
**तुमको नमन करोड़ों अर्पित ये जिन्दगानी**

गुरु को हर किसी की परख होती है उनने उसके जीवन के

अन्तिम काल को जान लिया और उसका अन्त सुधार दिया कहते हैं – **अंत भला तो सब भला**

**शिल्पी हैं मेरे गुरुवर –** जिस प्रकार एक पत्थर को परमात्मा बनाने में उसे पूज्य बनाने में जिन का आकार देने में शिल्पी का महत्वपूर्ण हाथ होता है उसही प्रकार एक मानव के अन्दर पूज्यता लाने के लिए, उसके अन्दर अनमोल गुण उत्पन्न करने में, जीवन को जीवन्त बनाने में, जन्म को सुधारने में गुरु का अकथनीय योगदान है इसीलिए तो कहते हैं –

**पत्थर को काट शिल्पी मूरत प्रभु की गढ़ता**
**पत्थर खड़ा जगह पर पुरुषार्थ शिल्पी करता**
**पत्थर मैं तुम हो शिल्पी भगवान बना देना**
**गुरुदेव मेरी नैया उस पार लगा देना**

जैसे पत्थर को शिल्पी काटता है, छाँटता है, ठोकता है, तराशता है वैसे ही गुरुवर हम जीवन्त पत्थरों को उठाते हैं, देखते हैं, इसमें भगवान बनने की योग्यता है या नहीं फिर उसके अवगुणों को काट छाँट कर बाहर निकालते हैं और व्रत नियम देकर जीवन का एक आकार बनाते हैं और फिर महाव्रत रूपी संस्कार देकर इस मिट्‌टी की मूरत को पूज्य बना देते हैं वह भी निरपेक्ष भाव से। वे हमारे जीवन को धरती से उठाकर आकाश में पहुँचा देते हैं।
गुरु ही सिखाते हैं –

**गीत गाना ही हमारी जिंदगी, मुस्कुराना ही हमारी जिंदगी**
**आँख से आँसू बहाना है नहीं खिलखिलाना ही हमारी जिंदगी**

गुरु ही हमारे जीवन में अमृत घोलते हैं गुरु के बिन जीवन नीरस निस्सार सा नजर आता है। यदि कभी कहीं भूल से भी हमारे द्वारा गुरु की उपेक्षा हो जाती है तो वह हमें बहुत ही कष्ट कारी होती है इसलिए शास्त्रों में कहा है कि ''**भले ही तुम किसी जीव का घात कर देना पंचेन्द्रिय जीव का हनन यानि आत्महत्या कर लेना लेकिन कभी भूल कर भी निर्ग्रन्थ गुरू की निंदा मत करना**'' **राजा**

**व राज्य की निंदा का फल मृत्यु, ब्रह्मनिंदा से दरद्रिता, देव निंदा से दुर्गति व गुरु निदां से कुल नाश को प्राप्त होता है।''**

गुरु निन्दा नरक निगोद यात्रा का टिकिट है – आपने शास्त्रों में पढ़ा होगा बड़े बुजुर्गों से सुना होगा कई ऐसे पात्र हुए हैं जिन्होंने गुरु निन्दा कर इस संसार में अनेकानेक कष्ट उठाए आप जानते हैं **श्रीपाल, राजा श्रेणिक, दुर्गन्धा, महासती सीता** जैसे नहीं बच पाये तो आप और हम तो कहाँ लगते हैं। श्रीपाल ने अपने पूर्व जन्म में एक तपस्वी मुनिराज जिनकी काय क्षीण हो गई थी तप करने से। धूल मिट्टी तथा पानी के मिश्रण से कोढ़ जैसी आकृतियाँ बन गई थे को देखकर श्रीपाल ने उन्हें कोढ़ी कह कर उनका उपहास किया और उसके सात सौ साथियों ने उसके इस कृत्य की हँसकर अनुमोदना की तो देखिए अगले भव में श्रीपाल और उनके 700 साथियों को कुष्ठ रोग हुआ। श्रीपाल ने उन मुनिराज को समुद्र में फिकवा दिया था और बाद में कहा निकाल दो उसे तो देखिए श्रीपाल भी धवल सेठ के द्वारा समुद्र में गिराए गए और निकालने के पुण्य से स्वयं समुद्र से पार कर सके थे। और एक बात बहुत ध्यान से सुनना अपने पास गाँठ बाँधकर रखना। **यदि किसी साधु का मुनि का यति का तुमने अपमान किया हो किसी दूसरे से कराया हो या फिर करने वालों की अनुमोदना की हो तो ध्यान रहे जब तक उन्हीं मुनिराज के चरणों में जाकर अपने कृत्य की आलोचना नहीं करोगे, इस पाप का प्रायश्चित्त नहीं करोगे तो वह पाप कर्म करोड़ों वर्षों के तप करने से भी नहीं कटेगा।** वह निधत्ति और निकाचित कर्म के रूप में बन्ध जाता है और वह कर्म तपस्या से, दान से, करुणा से, परोपकार से नहीं कटता है वह अपना फल देकर ही जाता है और हम यदि उसका प्रायश्चित्त कर लें तो वह कर्म उतना तीव्र फल नहीं देता है। पर शर्त यही है कि जिन मुनि के प्रति दुर्व्यवहार किया है क्षमा प्रायश्चित्त उन्हीं से लेना पड़ेगा वरना गलती किसी दूसरे के प्रति करो और क्षमा किसी दूसरे से माँगो। आज यही देखने में आता है गलती कहीं ओर की जाती है और क्षमा याचना कहीं और इसका साफ सुथरा उदाहरण श्रेणिक का आपके सामने है। आपको मालूम होगा कि राजा श्रेणिक जिनधर्म और जिन साधुओं से द्वेष रखता था

जबकि रानी चेलना जिनधर्म और गुरुओं से अतीव स्नेह रखती थी जिन धर्म पर उसका दृढ़ श्रद्धान था। जब राजा श्रेणिक ने यशोधर मुनिराज के गले में द्वेषवश मरा हुआ सर्प डाल दिया और बहुत खुश हुआ। जिस समय राजा श्रेणिक ने मरा हुआ सर्प मुनिराज के गले में डाला उसी समय उसने तेतीस सागर की आयु सहित सातवे नरक की आयु का बंध किया और महलों में चला आया। रात्रि में जब उसने महारानी चेलना को बताया कि आज मैं दिगम्बर मुनिराज के गले में मरा हुआ सर्प डालकर आया हूँ तो रानी चौंक उठी और बोली आपने यह क्या अनर्थ कर डाला। श्रेणिक ने उपहास में ही कहा कि अब तक तो वह साधु सर्प को अपने गले से निकाल कर भाग गया होगा। चेलना कहती है– नहीं महाराज! यदि वे मेरे गुरू हैं, दिगम्बर मुनि हैं तो अभी भी उसी स्थान पर बैठे होंगे। राजन् को विश्वास न हुआ और बोला चलो अभी चलकर देखते है रानी बोली ठहरो मैं अभी आती हूँ और वह साथ में शक्कर व लेप साथ लेकर राजा श्रेणिक के साथ उसी स्थान पर पहुँची जहाँ मुनिराज ध्यान मुद्रा में बैठे थे। उपसर्ग जानकर उन्होंने अपने ध्यान को नहीं तोड़ा। देखकर रानी चेलना बोली महाराज! आपने यह क्या अनर्थ कर दिया मैंने कहा था कि अगर दिगम्बर मुनिराज होंगे तो उसी स्थान पर मिलेंगे। श्रेणिक भी देखकर चकित रह गया कि मरे हुए सर्प पर असंख्यात चीटियाँ लग रहीं हैं और उन चीटियों ने मुनिराज के शरीर में अनेक छेद घाव कर दिए हैं। चेलना ने विवेक से काम लिया और मुनिराज के चारों ओर शक्कर को बिखेर दिया जिसकी खुश्बू से सारी चीटियाँ मुनिराज के शरीर से नीचे उतर आईं अब चेलना ने मुनिराज के शरीर पर हुए घावों को पोंछा और उन पर लेप लगाया। उपसर्ग दूर जानकर मुनिराज ने जब ध्यान खोला तो चेलना और श्रेणिक ने मुनिराज को नमस्कार किया। मुनिराज ने दोनों को धर्म वृद्धि का आशीर्वाद दिया यह देखकर राजा श्रेणिक पानी– पानी हो जाता है और मुनिराज के चरणों में गिर पड़ता है। अपने किए कुकर्म की क्षमा याचना और प्रायश्चित ग्रहण करता है। जब उन्हीं मुनिराज से प्रायश्चित्त ग्रहण करता है और उसी समय से वह जैन धर्म का कट्टर अनुयायी बन जाता है और भगवान् महावीर के समवशरण में जाकर इतनी भक्ति

करता है कि सातवें नरक की बंधी आयु को पहले नरक की कर लेता है। आयु सातवें नरक से पहले नरक की अवश्य कर ली लेकिन राजा श्रेणिक क्षायिक सम्यक्त्व को पाकर तीर्थंकर प्रकृति का बंध करने के बाद भी मुनि के ऊपर किए उपसर्ग के फल को नहीं छुड़ा पाया, नरक आयु को नहीं बदल पाया। इसीलिए तो कहा है –

**गुरु निन्दक नर बहु दु:ख पायें**
**कर उपसर्ग नरक में जायें**

इसीलिए कहता हूँ –

**गुरू निंदा मुख लाएगा वो जिंदा मर जाएगा–2**
**कभी नहीं उठ पाएगा ऽऽऽ**
**निन्दा वो इंसान करे जो खुद पर अभिमान करे–2**
**निन्दक नहिं जग में हो ऽऽ–2 सम्मान को पाये रे ऽऽऽ**

आपने शास्त्रों की बहुत बातें सुनी कि गुरू की निंदा करने का ऐसा फल मिला यह शास्त्र की बात हुई मैं तुम्हें हकीकत बताता हूँ कि गुरु निन्दा गुरु के अपमान का फल तुरन्त मिलता है । टीकमगढ़ की सत्य घटना है तपस्वी सम्राट ''आचार्य सन्मतिसागर जी'' महाराज का चातुर्मास हुआ। एक दिन वे मन्दिर के दर्शनार्थ गये जब वे मँझार के मंदिर पहुँचे तो एक महिला जो अपने को विद्वान आगम वेत्ता समझती थी बोली इस मन्दिर में बीस पंथी साधुओं का प्रवेश वर्जित है यहाँ पर (उसने संघ विशेष का नाम लिया और कहा) मात्र तेरहपंथी साधु ही दर्शन कर सकते हैं देखिए यहाँ उसने एक महान आचार्य एक साधु का अपमान किया उनके दर्शन में बाधक बनी घर पहुँची तो तीसरी मंजिल की सीढ़ियों से ऐसी गिरी कि फिर अपने पैरों पर खड़ी न हो सकी वह भी भगवान के दर्शनों को तरसने पर मजबूर हो गई और मेरे ख्याल से आज भी वह महिला जिन्दा है पलंग पर पड़ी है। और आपको बताऊँ अपने ही खानदान की बात मेरे गृहस्थ जीवन के चाचा एकान्त मत मानने वाले थे वैसे मेरा पूरा खानदान ही एकान्त मत वाला था सिर्फ मेरे जन्मदाता उस मत को नहीं मानते थे और उन सब से लोहा लेते थे। एक बार उन एकान्त

मत वालों ने किसी पंडित को बुलाया प्रवचन के लिए, उस प्रवचन सभा में मेरे पिताजी भी बैठे थे। पंडितजी ने अपने व्याख्यान में मुनि निन्दा के वाक्य बोले तो पिताजी बीच में ही बोल पड़े पंडित जी शास्त्र की गद्दी पर बैठे हो मुनि निन्दा की बात मुख से मत निकालो तो दादाजी (पिताजी के पिताजी) ने उन्हें रोकना चाहा कि प्रवचन सभा के बीच में नहीं बोला जाता है। तब पिताजी ने कहा पंडितजी या तो अपने मुनि निन्दा के शब्द वापस लीजिए या फिर बाहर आकर मुझसे निपट लीजिए। पिताजी माने हुए पहलवान थे प्रवचन सभा समाप्त हुई पिताजी मन्दिर के दरवाजे पर खड़े थे अब सभी लोग इस चिन्ता में थे कि पंडित जी को कैसे बाहर निकाला जाये। दो घण्टे तक उन लोगों ने इन्तजार किया लेकिन पिताजी पक्के मुनि भक्त थे मुनि की निन्दा करने वाले को कैसे छोड़ते? तब उन लोगों ने एक योजना बनाई और मंदिर की छत से दूसरों के घरों की छत पर पंडितजी को कुदाया और छत ही छत से रातों रात ही पंडितजी को भिण्ड से बाहर भगाया। **निंदक इतना कमजोर होता है कि वह किसी भक्त का सामना नहीं कर सकता है** इसीलिए तो कहा –

**''हजार निन्दा करने वालों से एक देवशास्त्र गुरु के भक्त की आवाज दमदार होती है।''**

तो मैं बात कर रहा था अपने गृहस्थ जीवन के चाचाजी की। वे मुनियों को नहीं मानते थे उनकी आलोचना निंदा करना उनका शौक था। दिगम्बर मुनियों को देखकर झुकना तो दूर वे उन्हें देखकर थूक देते थे लेकिन जिनवाणी कहती है

**''जहाँ मिले तहाँ गुरू पद बन्दो**
**हरष भाव गुरू गुण अभिनन्दों**

मुनियों से घृणा करते थे उनकी पत्नि व बेटी भी संतों की अवहेलना करने में पीछे नहीं रहती थी। जब मेरे गृहस्थ के पिताजी मुनि बनने जा रहे थे तो उनने उन्हें बहुत समझाया उनके मन में कुछ लगा कि गुरुओं के पास जाऊँ उनकी वैयावृत्ति कँरू, आहार दान दूँ लेकिन बेटी और पत्नि के कारण मन की मन में ही रह जाती थी।

एक बात यहाँ पहले आप लोगों को बता दूँ कि **जो मुनियों की निन्दा करता है आलोचना करता है उसका वंश नष्ट हो जाता है। पहले ही बता चुके हैं।**

तो बात चल रही थी कि एक मुनि निंदक परिवार था समय चक्र कुछ ऐसा चला कि घर का नौकर जिसे वे अपने बेटे की तरह मानते थे उसके मन में लालच आ गया और उसने अपना काम शुरू किया। देखिए उसने सबसे पहले बेटी को मार डाला क्योंकि वह सबसे अधिक मुनि विरोधी थी बेटी का खात्मा और वह भी नाटकीय ढंग से फिर बेटी की माँ की जीवन लीला समाप्त की। जब चाचाजी बाजार से घर आये तो माँ बेटी को आवाज लगाई पर कोई प्रतिउत्तर न मिला। परेशान हुए कि आखिर दोनों माँ बेटी कहाँ चली गई। अन्दर देखा तो एक कमरे में बेटी एक कमरे में माँ दोनों को खून से लतपथ जमीन पर पड़े देखा। देखकर कुछ कहते इससे पहले ही नौकर ने उन पर वार किया और वे भी इस दुनियाँ से चल बसे।

देखिए बेटी सबसे ज्यादा मुनि विरोधी थी सबसे पहले खत्म हुई फिर माँ। चाचा जी के भाव कुछ बदले थे तो अन्त में उनका मरण हुआ। शास्त्रों की बात यहाँ चरितार्थ हो गई कि –

**जो मुनियों की निन्दा करता है उसका वंश ही नष्ट हो जाता है।**

**मिला संतसग जो गुरु का तो सारे पाप धुल जायें**
**सुनें हम संत की वाणी तो सब संताप गल जायें**
**गुरु भक्ति की गंगा है नहा लो भाग्य हैं अपने**
**कई जन्मों से गुरुवर के दर्श हमने ये पाये हैं।**

# मुनि श्री द्वारा
# रचित साहित्य की तालिका

# मुनि श्री द्वारा
# रचित साहित्य की तालिका

# मुनि श्री द्वारा
# रचित साहित्य की तालिका

## चार लाइनें

करोड़ों मुख से गुरुवर के गुणों को गा नहीं सकता
जहाँ गुरुदेव पहुँचे हैं वहाँ मैं जा नही सकता
गुरु ने हाथ खुश हो दिल से सिर पर रख दिया जिसके
हजारों गर्दिशों में भी वो ठोकर खा नहीं सकता ।।

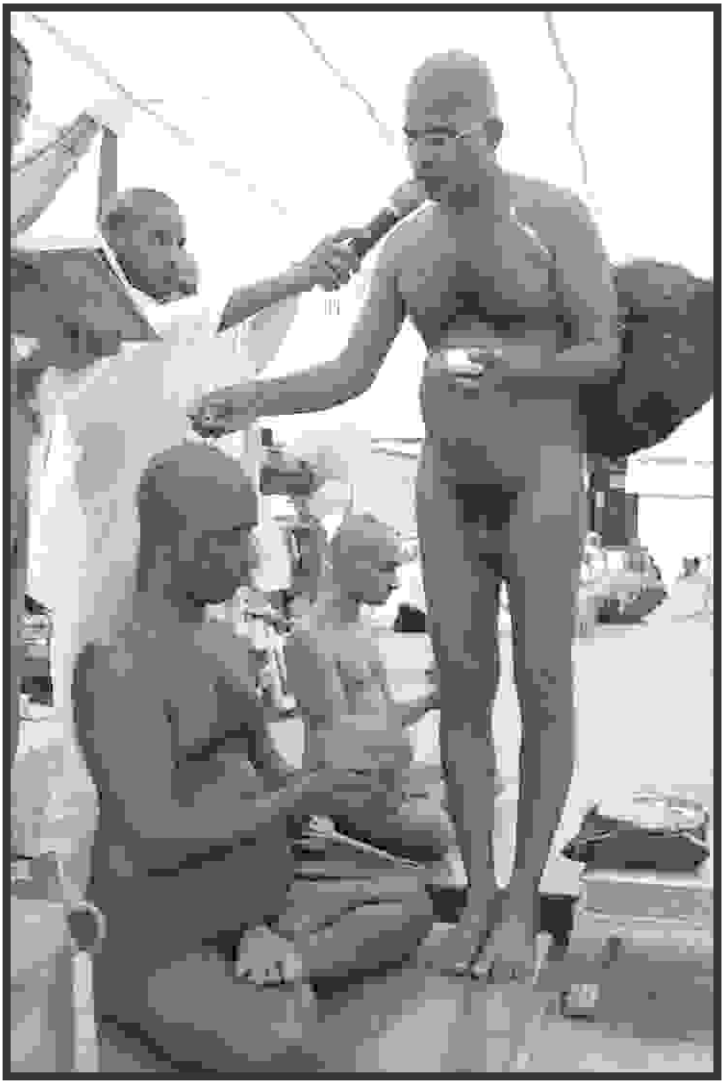

# भजन